घोंसला बनाने की कला

नरेंद्र देवांगन

हमारे देश में पक्षियों को प्राचीन काल से ही महत्ता दी जाती रही है। क्रौंच वध से प्रेरित होकर आदि कवि ने काव्य शिल्प की आधारशिला रखी। महापुरुष श्रीकृष्ण ने अपने मुकुट में सतरंगी मोरपंख को सर्वोच्च स्थान दिया तथा महान सम्राट अशोक ने बौद्धमत में दीक्षित होने के उपरांत पक्षियों को संरक्षण दिया। मुगल सम्राटों ने शिकारी पक्षियों को पाला। यद्यपि ऐसे अनेक प्रसंग जाने-अनजाने बिखरे पड़े हैं जो पक्षियों की महत्ता पर प्रकाश डालते हैं किंतु पक्षियों पर वैज्ञानिक ढंग से विवेचन अंग्रेज़ों से पूर्व नगण्य-सा ही था।

इस संदर्भ में भारतीय पक्षी विज्ञान का प्रारंभ 1862-64 में टी.सी. जेरडन द्वारा लिखित पुस्तक *दी बर्ड्स ऑफ इंडिया* से माना जाता है। डॉ. जेरडन फौज में सर्जन थे और वर्षों तक देश के विभिन्न भागों में रह चुके थे। इसके बाद पक्षी विज्ञान में दूसरा महत्वपूर्ण नाम एलेज ओक्टेविन ह्यूम का आता है जो इंडियन सिविल सर्विस में थे और जो इंडियन नेशनल कांग्रेस के संस्थापक भी रहे हैं। ह्यूम ने 1872-1888 ई. तक भारतीय पक्षी विज्ञान पत्रिका *स्ट्रेफेदर्स* का संपादन किया जिसमें भारतीय पक्षियों के बारे में कई महत्वपूर्ण जानकारियां दी गई थीं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारतीय पक्षी विज्ञान में काफी काम हुए जिनमें व्हिसलर और क्लाड बी. टाइसहर्स्ट के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। आज भारतीय पक्षियों पर अनेक सामान्य पुस्तकें उपलब्ध हैं तथा इस विषय पर विभिन्न दृष्टिकोणों से पुस्तकें लिखी तथा प्रकाशित की जा रही हैं। पक्षी विज्ञान पर वैज्ञानिक एवं शोधपरक कार्य बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी, सलीम अली पक्षी अनुसंधान संस्थान तथा दिल्ली चिड़ियाघर द्वारा किया जा रहा है।

पक्षी वैज्ञानिकों के अनुसार कई पक्षियों में उनकी मस्तिष्क संरचना के आधार पर उनकी समझ का स्तर बहुत उच्च होता है। जिन पक्षियों में समझ का स्तर बहुत उच्च नहीं होता वे अपनी सहज वृत्ति के कारण, जो उन्हें पीढ़ी-दर-पीढ़ी सहजता से प्राप्त होती है, के द्वारा प्रवास यात्राएं, आचार-व्यवहार, कला-कौशल पूरा करते हैं तथा इसी गुण से वे अपना अस्तित्व बनाए रखते हैं। अपनी प्रजाति के अस्तित्व को बनाए रखने में नीड़न (घोंसला बनाने) की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जाती है तथा नीड़न के उपरांत अंडों एवं उनसे उत्पन्न शिशुओं की उत्तरजीविता की समस्या पक्षियों के समक्ष एक चुनौती होती है। इस चुनौती का सामना वे अपने कला-कौशल का प्रयोग घोंसलों के निर्माण के रूप में करते हैं। किंतु शत्रुओं से अपने शिशुओं की रक्षा की चुनौती से अधिक ज़रूरी उनके समक्ष शिशुओं को दिए जाने वाले आहार की होती है। पक्षी वैज्ञानिक डॉ. सलीम अली के अनुसार पक्षी का एक नवजात बच्चा चौबीस घंटों के भीतर अपने भार से अधिक आहार ले लेता है। इसलिए पक्षी अपना नीड़न उस समय करते हैं जब उनके शिशुओं के लिए पर्याप्त मात्रा में भोजन उपलब्ध हो। इसके लिए वे प्रतिकूल मौसम को भी झेल लेते हैं। वैसे वर्षा तूफान, झंझावात की ऋतु होती है, किंतु इस मौसम में कीट-पतंगे, कृमि आदि बहुलता से उपलब्ध होते हैं। पक्षी वर्षा में एक बार ही घोंसला बनाते हैं। यदि वह नष्ट हो जाए तो फिर से भी बना लेते हैं।

पक्षी वैज्ञानिकों के अनुसार जिन प्रजातियों के पक्षियों का शिकार अधिक होता है उनमें उत्तरजीविता के लिए संघर्ष की क्षमता अधिक होती है। यदि बहुत ही प्रतिकूल परिस्थितियां न हों तो वह प्रजाति जल्दी विलुप्त नहीं होतीं। घरेलू मुर्गी मानक आहार मिलने पर जहां वर्ष भर अंडे देती है, वहीं बगुला, सारस, फुदकी, दर्जिन तथा फूलचुकी आदि वर्ष में केवल एक बार अंडे देती हैं। बोगहंस जैसा पक्षी अगर अनुकूल मौसम न हुआ तो उस वर्ष अंडे ही नहीं देता।

कुछ पक्षी जहां अपने घोंसलों की सफाई पर विशेष ध्यान देते हैं, वहीं कुछ पक्षी अपने घोंसलों में इतनी दुर्गंध

रखते हैं कि उस दुर्गंध से उनके शत्रु उन तक फटकते ही नहीं। हुदहुद ऐसा ही पक्षी है जो अपनी रक्षा अपने घोंसले की दुर्गंध से करता है। कुछ पक्षियों के बच्चे घोंसलों में ही बीट करते हैं, किंतु कुछ पक्षी ऐसे होते हैं जिनके बच्चे अपना मल मुंह से त्याग करते हैं और उनका घोंसला साफ-सुथरा बना रहता है। यह देखा गया है कि फुदकी अपने बच्चों को जहां कीट-कृमि लाकर खिलाती है, वहीं कुछ अंतराल में अपने बच्चों के मुख से सफेद गोला-सा निकालकर ले जाती। फूलचुकी का बच्चा अपने मुख से लाल रंग का मल त्याग करता है जबकि बाज के बच्चे का मल काला होता है।

एक बार एक पक्षी विज्ञानी के ऊपर जैतूनी रंग का फूलचुकी का बच्चा गिरा। फूलचुकी के बच्चे के पर अभी पूर्णतः विकसित नहीं हुए थे, उसकी पूंछ भी नहीं निकली थी। विज्ञानी ने उसे उठा लिया। फूलचुकी का यह बच्चा उड़ नहीं सकता था। पक्षी विज्ञानी को उसका घोंसला भी दिखाई नहीं पड़ा। लिहाज़ा उसे छोड़ना उपयुक्त नहीं था। अब समस्या थी कि इसे बचाने के लिए क्या किया जाए? उस विज्ञानी को याद आया कि उनकी एक परिचित हैं जिन्होंने कभी सनबर्ड पाले थे और उसे चीनी के घोल पर जीवित रखा था। वे फुदकी, फाख्ता, मुर्गी, कबूतर, तोते आदि की भांति न तो दाना चुग सकते हैं और न ही फल खा सकते हैं।

किंतु किसी भी प्रजाति के बच्चों को वयस्क होने के पहले तक पालना सुगम होता है क्योंकि ये बच्चे गले तक मुख फाड़कर खाते हैं तथा चोंच का प्रयोग करते ही नहीं। फिर भी उसने फूलचुकी के बच्चे को मेज़ की दराज़ में रख दिया। भूख से वह काफी चिंचियाता रहा। इसी समय एक छोटी-सी बोतल में चीनी का घोल तैयार कर पंद्रह-पंद्रह मिनट के अंतराल पर उसे देता रहा। फूलचुकी का बच्चा विज्ञानी के पास कोई नौ दिन तक रहा। जैसे-जैसे वह वयस्क होने लगा वैसे-वैसे उसकी खुराक कम और बदलनी शुरू कर दी गई। आरंभ के पांच दिनों तक वह विज्ञानी के साथ था। उसके माता-पिता की भूमिका का निर्वाह विज्ञानी ने किया। किंतु जब वह कुछ बड़ा हो गया तो यह दायित्व पक्षी विज्ञानी की पत्नी ने उठा लिया।

पति-पत्नी दोनों ने महसूस किया कि पक्षियों में बड़ी तीव्र संवेदनशीलता होती है। अब वह फूलचुकी का बच्चा घर के सदस्यों की गोद तथा कंधों पर आकर बैठता और एक अजीब-सी आत्मीयता से चहचहाने लगता। रात्रि को पलंग के पास क्रोटन पर बनाए अपने घोंसले में अपनी गर्दन अपने डैनों में छिपाकर राजसी ढंग से सोता। पक्षी विज्ञानी ने रात्रि में कई बार यह महसूस किया कि फूलचुकी मानो हज़ारों ध्वनि तरंगें निकाल रही है और उनके मस्तिष्क पर ऐसी ही हज़ारों सुइयां चुभ रही हैं। इसके पीछे का वैज्ञानिक कारण तो स्पष्ट नहीं हो पाया था, किंतु यह अनुमान अवश्य हो गया था कि फूलचुकी कुछ ऐसी ध्वनि तरंगे निकालती हैं जो अल्ट्रासाउंड या इसके निकट की हैं।

अब वह स्वयं अपना आहार लेने लगा था। इसके लिए ब्रेड-जैम, अंगूर के छोटे-छोटे दाने तथा चीनी घोल रख दिया जाता। किंतु एक दिन वह घर की छत के पंखे से टकराकर घायल हो गया और काफी संघर्ष के बाद भी जीवित न रह पाया।

उत्तरप्रदेश के बस्ती ज़िले के एक गांव के बीच में एक बड़ा-सा पोखर है। पोखर के तीन तरफ आम्रकुंज हैं। इन आम्रकुंजों में नीलकंठ, किंगफिशर, फाख्ता, बगुले, पीलक, लालमुनिया, तोता, हार्नबिल देखे जा सकते हैं। किंतु इन सबसे परे हर वर्ष अक्टूबर-नवंबर में हिमालय से दक्षिण की ओर, वी आकार में लंबी-लंबी कतारों में कराकुल पक्षियों के झुंड आते हैं और खूब आवाज़ करते हैं। इसका तात्पर्य है, लो कराकुल आ गए और रबी की फसल बोने का समय हो गया। अपनी इन्हीं ध्वनियों के कारण इन्हें कराकुल अथवा जलीय काला बाज भी कहते हैं।

साइबेरिया से आने वाले ये पक्षी शरद ऋतु शुरू होते ही भारत आ जाते हैं। बहेलियों को छोड़कर सामान्य लोग काले बाज को आदर की दृष्टि से देखते हैं तथा इन्हें कभी नहीं छेड़ते। यद्यपि हमारे यहां जीव दया एक सामाजिक मर्यादा है, किंतु पक्षियों के विस्तृत ज्ञान व उनकी उपादेयता की जानकारी के अभाव में हम उनके संरक्षण के प्रति निष्क्रिय हो जाते हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***